दोगे डमदिर की दो कविताएँ

(1)

वो सात दिन
घर से दूर
अपनों से दूर
एक नए शहर में
एक नए एहसास को महसूस करते हुए
ले आयी...
एक रंग, दूसरा रंग
एक और रंग
समाज का, संस्कृति का
व्यक्ति का, समष्टि का।

इन सँकरी गलियों में
बाहें फैलाए चल रहा है वर्तमान
चल रही हैं गलियां भी
अनवरत, अविराम।

मैंने देखा!
संस्कृति पोषित करते
विद्वानों को
गुरु-शिष्य, ईश्वर-भक्त को
जो अपने आपमें पूरी परंपरा थे
अखंड और नश्वर।

यह मंदिरों का शहर
जहाँ ज्ञात हुआ
घर एक मंदिर है यहाँ।
नाव गंगा पर
हम नाव पर
आगे बढ़ रहे
मंथर-मंथर।
फिर देखा-
मणिकर्णिका की भूमि
गंगा के रहते
दु:ख की लपटों में जल रही
सामने शीतल, अग्नि शामक
कई-कई लपटें उठ रही...
हो रही स्वाहा-स्वाहा,
सत्य, यही निर्धारित अन्ततोगत्वा।

एक का सुख, दूजे का दु:ख
कितना विरोधाभास है
इस जीवन में,
यह सात दिन नहीं
जीवन के सात जन्म की तरह है।

(2)

नमक जीवन का
सिसकियां, सिसकती मरती हैं
कोई नहीं सुनता उसे
पीड़ा का नमक चखकर
वह छन्न से टूट जाती हैं।

*(**लेखकीय परिचय :** डॉ. दोगे डमदिर दोज्यी-पोलो शासकीय महाविद्यालय, कामकी, वेस्ट सियाङ जिला, अरुणाचल प्रदेश के हिंदी विभाग में सहायक प्रोफेसर हैं। मोबा: 8794163810, ई-मेल : dogengomdir66842@gmail.com)*